P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-2* May- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 Remarking An Analisation

बाल साहित्य : विविध आयाम

अंतिमा चौधरी
शोध छात्रा,
हिन्दी विभाग,
मुंबई विश्वविद्यालय,
मुंबई

सारांश

आज हिन्दी साहित्य में उपजे बाल विमर्श को समाज में हो रहे बच्चों के प्रति अनदेखी प्रवृत्ति का प्रतिफल कह सकते हैं। ऐसा नहीं है कि हिन्दी साहित्य के पुरा कालों में बालमन, बाल प्रवृत्तियों की बातें नहीं होती थी, बल्कि कहें तो सूरदास के साहित्य का सबसे अधिक भाग इसी बालपन को समर्पित है। हां बस वह जो बालक है वह किलकारी करता है, हठ करता है, शरारतें व अपने चंचल व्यवहार से सबका मन मोह लेता है। उस समय के सरल सामाजिक ढाँचे में बच्चों की मासूम छवि ही दिखायी गयी है। तब लेखक बच्चों के विषय में लिखते समय पशु–पक्षियों, परियों की कथाओं, और राजा–रानी की कहानियों का जिक्र करता था, परन्तु आज के भागते–दौड़ते और एकांगी हो गये इस समाज ने बच्चों से उनकी चंचलता छीन कर बाल्यावस्था से मोटी–मोटी किताबों और बस्तों का बोझ लाद दिया। सतरंगी इंद्रधनुष और तितलियों के सपने देखने वाला बालमन अब चश्मे के मोटे–मोटे फ्रेम के पीछे से दुनिया देख रहा है। माँ की लोरी और दादी–नानी की कहानियाँ 21 इंच के वर्गाकार डिब्बे में सिमट गयी हैं।

यही सब कारण है कि साहित्य में भी लेखन शैली में बदलाव हुआ। हालांकि पहले जिस प्रकार भारतेन्दु से लेकर सुभद्रा चौहान तक बच्चों के लिए गीत, कविता व कहानियाँ लिखे जा रहे थे उसी तरह भी बाल विषयक लेखकों की अच्छी श्रृंखला है। उसी तरह आज भी नंदन, चंपक एवं नागराज जैसी बच्चों के लिए निकलने वाली पत्रिकाओं ने भी यह दायित्व संभाला है। लेकिन डोरेमन, पोगो, छोटा भीम के तरह के माध्यमों ने बच्चों को किताबों से दूर कर दिया और बच्चे इनमें बंधे चले जा रहे हैं।

ऐसा इसलिए भी है कि खुद की आपाधापी में उलझे हम बड़ों के पास बच्चों और उनकी रूचियों के लिए देने को समय नहीं है, परन्तु इन सबका अधिक दुष्परिणाम न हो अतः हमें बाल विमर्श को अधिक गंभीरता से लेने की आवश्यकता है।

मुख्य शब्द : बाल विमर्श, साहित्य समाज

प्रस्तावना

कहते हैं 'साहित्य समाज का दर्पण है, पर तेजी से बदलते या कहें की भागते हुए आज के इस दौर में इस दर्पण में देखने की फुर्सत किसे है। व्यक्ति रोज कुछ नयेपन की तलाश में लगा रहता है। साहित्यिक विधाओं में भी हर दिन कोई नयी क्रान्ति–नयी बहस हो रही है, कहीं ठहराव नहीं है। मुख्य धारा के साहित्यकारों का ध्यान भी अलग–अलग तरह के अस्मितावादी विमर्शो की तरफ है। ऐसे में व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास का माध्यम रहा साहित्य कहीं न कहीं सीमित हो रहा है साथ ही सीमित हो रही व्यक्ति की मानसिकता भी। अतः आवश्यक है कि इसका नये सिरे से विश्लेषण किया जाए और इसी क्रम में व्यक्ति का अध्ययन उसके बालरूप से किया जाए तो कोई हर्ज न होगा। बच्चों का मन कच्चे घड़े की तरह होता है जिसे जिस तरह से ढाल दिया जाए वह वैसा ही व्यवहार करेगा। बच्चों में उत्सुकता, अनुकरणशीलता तथा कल्पनाशीलता का गुण ज्यादा होता है अतः यह आवश्यक है कि बच्चों के लिए जो लिखा जा रहा है वह मनोरंजक के साथ ही उपयोगी व सकारात्मक भी हो।

अतः हम कह सकते हैं कि बच्चों के मानसिक स्तर को देखते हुए रोचक शिक्षा प्रद लेखन को 'बाल साहित्य' कहा जा सकता है अर्थात् ऐसा साहित्य जो मनोरंजन करे तथा बच्चों के व्यक्तित्व में निखार भी लाये। बाल साहित्य एक प्रकार से किसी भी देश के मुख्यधारा या वयस्क साहित्य की पूर्व पीठिका भी है क्योंकि इसे पढ़कर जो पीढ़ी तैयार होगी वह ही आने वाले समाज–साहित्य व भाषा को रचती गढ़ती है।

साहित्यावलोकन

हिन्दी साहित्य में बाल साहित्य की पुरानी एवं समृद्ध परम्परा रही है। एक तरफ जहाँ पंचतन्त्र, हितोपदेश जैसे उपदेशात्मक कहानियों से बच्चों को मनोरंजनपूर्ण शिक्षा देने का प्रयास हुआ तो वहीं साथ ही सूरदास, तुलसीदास जैसे महाकवियों ने अपने ईश्वर, की बाल्यावस्था का मनमोहक पूर्ण झाँकी का दर्शन अपने लेखन में कराया है। हिन्दी साहित्य में बालविमर्श का अप्रत्यक्ष रूप से शुरूआत माने तो सूरदास ही इसके प्रारम्भिक एवं प्रतिनिधि रचनाकार माने जा सकते हैं। साथ ही अन्य अष्टछाप कवियों एवं रसखान, मीरा आदि के पदों में भगवान श्री कृष्ण के बाललीला का मोहक वर्णन हुआ है। इनसे पूर्व अमीर खुसरो के यहाँ भी पहेलियों, ढकोसलों आदि में बच्चों के लिए आकर्षक सामग्री उपलब्ध है।

इसी प्रकार समय के साथ आगे चलते हुए स्वतन्त्रतापूर्ण और स्वतन्त्रता पश्चात् भी बाल साहित्य थोड़े–बहुत स्व में मौजूद रहा। प्रेमचंद, प्रसाद, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, महादेवी, भगवती प्रसाद वाजपेयी, जैनेद्र आदि ने क्रमशः ईदगाह, छोटा जादूगर, काबुलीवाला, गिल्लू, मिठाईवाला, एवं पाजेब जैसी और अन्य कहानियाँ भी लिखी जिनमें बालमन के विभिन्न अवस्थाओं एवं परिस्थितियों का चित्रण है तो कविताओं में भी सुभद्रा कुमारी चौहान की कविता में बचपन को बुला रही' द्वारिका प्रसाद की कविता 'कौन सिखाता चिड़ियों' को एवं नागार्जुन की प्रसिद्ध कविता 'दंतुरित मुस्कान' जैसी कविताएँ बाल साहित्य को शोभामय कर रही हैं।

इनके पश्चात् हरिकृष्ण देवसरे, निरंकार देव सेवक, उषा यादव, जाकिर अली, प्रकाश मनु रोहितश्व स्थाना ने जैसे लेखकों की भी फौज है। जिसमें बालमन के मनो भावों का खाका है। बालमन के मनोवैज्ञानिक अध्ययन की दृष्टि से मन्नु भण्डारी का उपन्यास 'आपका बंटी' भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जिसमें आधुनिक परिवेश में जूझते बच्चे की कहानी है।

इस प्रकार बाल साहित्य में लेखकों की एवं पाठकों की हाल फिलहाल बढ़ती रूचि के चलते यह आज फिर प्रासंगिक बना है। अतः बाल साहित्य के तरफ अपनी कमियों को स्वीकारते हुए भविष्य में बाल विमर्श को सृजनात्मक समृद्ध करने का प्रयास करना होगा।

अध्ययन का उद्देश्य

आज के उत्तर आधुनिक समय ने मनुष्य से जुड़े सभी विमर्शो और उनकी अस्मिताओं को सुरक्षित रखने का अवसर दिया है। प्रत्येक व्यक्ति सजग और सक्रिय रूप से स्वयं को एक पाले में रख अपने पाले की सुरक्षा कर रहा है। चाहे वह दलित हो, स्त्री हो, आदिवासी हो या अल्पसंख्यक, सभी अपने अस्तित्व को लेकर जागरूक हो गये हैं और समाज में अपनी अनदेखी के विरूद्ध प्रतिरोध भी कर रहें हैं। इन सबके मध्य एक ऐसा वर्ग है जो बच्चों का है वह शान्त, मासूम और आज की उहापोह भरी जिन्दगी से त्रस्त है जिसके प्रति ध्यान ही नहीं गया। ये बच्चे किसी विशेष वर्ग, समुदाय, धर्म के नहीं अपितु बस बच्चें हैं जो स्वयं के लिए समाज में उतनी परिपक्वता के साथ बहस नहीं कर सकते जितने की अन्य अस्मितावादी विमर्शों में हैं अतः मेरे लेख का उद्देश्य इन बाल मन की कोमलता को हमेशा बनाये रखने के लिए आवश्यक बिंदूओं पर निरंतर बात करते रहने की दिशा में छोटा सा प्रयास है।

प्रायः हम देखते हैं कि बाल साहित्य में ज्यादातर ऐसी चीजों का प्रयोग होता है। जो बच्चों को आकर्षित करे जैसे– राजा–रानी, परी तथा पशु–पक्षी आदि की कहानियाँ, जिन्हें बढ़ने से बच्चों में पढ़ते रहने की उत्सुकता बनी रहती है। यह वह प्राथमिक लेखन है जो बच्चे को उनके आस–पास के वातावरण, समाज संस्कृति से सरल साहित्यिक रूप से परिचित करवाती है तथा एक समझ पैदा करती है। यूँ तो बाल साहित्य का प्रारम्भ मौखिक रूप से दादी–नानी के किस्सा कहानियों से ही हो गया है पर यदि लेखन साहित्य की बात करें तो प्राचीन काल में ही 'विष्णु शर्मा' कृत 'पंचतन्त्र' तथा नारायण कृत 'हितोपदेश' जैसे शिक्षार्थ हेतु कृतियाँ लिखी जा चुकी हैं। हिन्दी साहित्य में भी बाल साहित्य की रचनाएँ होती रही हैं चाहे वह खुसरो की रोचक पहेलियों के रूप में हो या सूरदास के मोहक बालकृष्ण लीला वर्णन में हो, यह क्रम उत्तरोत्तर बढ़ता ही रहा है तथा बाल साहित्य के सभी आयामों भी समृद्ध होते रहे। रचनात्मक रूप से बात करें तो बाल साहित्य में लोरी, कविता, कहानी, नाटक आदि रोचक विधाएँ रही है। भारत में लोरियों की तो बहुत पुरानी परम्परा रही हैं। लोरी बच्चों को उनके प्रियजनों द्वारा खासकर सुलाने के लिए प्रयोग में लाया जाने वाला गीत है। लोरी को शब्दों में परिभाषित करने का प्रयास करते हुए निरंकार देव सेवक का कहना है कि ''लोरी की कोई निश्चित परिभाषा न बन पाने के कारण ऐसे सब गीतों को हम लोरियों के अन्तर्गत ले सकते हैं, जिनमें माताओं की बच्चों के प्रति मोहममता के साथ–साथ सद्भावनाओं की अभिव्यक्ति हुई है।''[1] लोरियों में ज्यादातर बच्चों को आकर्षित करने वाले परिवेश का जिक्र है। ऐसे ही बच्चों को मनाने के लिए माँ द्वारा गायी लोरी का उदाहरण द्रष्टव्य हैं–

चन्दा मामा दूर के पुए पकाए गुड़ के
आप खाये थाली में मुन्ने को दें प्याली में
प्याली गई टूट, मुन्ना गया रूठ
लायेंगे नई थालियाँ, बजा बजा के तालियाँ
मुन्ने को मनायेंगे, दूध मलाई खायेंगे

लोरियाँ बच्चों के बालपन की सुखद अनुभूति है जो बच्चों में सकारात्मकता का संचार करती है परन्तु आजकल लोरियाँ लुप्त होती जा रही हैं। आधुनिकता के इस दौड़ में लोरियों की जगह टी0वी0 कार्टून्स हो गये। जब भी बच्चा रोता है तो माता–पिता तुरन्त टी0वी0 खोलकर डोरेमन, पोगो जैसे कार्टून्स लगा देते हैं और बच्चा भी व्यस्त हो जाता है पर यह प्रक्रिया बच्चे को अपने में ही संकुचित कर देती है। अतः जरूरी है की माता–पिता बच्चे को समय दें तथा बच्चों की किलकारियों से लोरी को अलंकृत करें।

बच्चों को आकर्षित करने का सबसे सरल व रोचक माध्यम है–कविता। बाल कविताएँ ज्यादातर छोटी और आसान शब्दावलियों वाली होती है जिन्हें बच्चे आसानी से याद कर सकें। कविताएं हमेशा से हिन्दी

साहित्य का मुख्य हिस्सा रहीं हैं आज जो बाल कविताएं चर्चा में है वह आधुनिक काल की देन है। इस काल में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से लेकर निराला, दिनकर तथा सुभद्रा कुमारी से लेकर महादेवी सभी ने बाल कविताओं को लिखा है। इन कविताओं के विषय भले ही अलग होते रहे हों पर उद्देश्य हमेशा बाल मनोरंजन व शिक्षा ही रहा है ये कविताएँ सृजनात्मक रूप से बच्चों के मानसिक विकास में भी सहायक रही हैं। बाल कविता में ऐसी ही कल्पनाशीलता का उत्कृष्ट नमूना है सर्वेश्वर दयाल की कविता 'बतूता का जूता' में है।

''इब्न बतूता
पहन के जूता
निकल पड़ी तूफान में
थोड़ी हवा नाक में घुस गई।
घुस गई थोड़ी कान में।''[2]

बच्चों की कविताओं में एक प्रकार का संदेश भी होता है जो उसे आस पास के वातावरण का भी परिचय देता है जैसे बच्चे के प्राइमरी स्तर की कविता में है कि–

उठो लाल अब आँखें खोलो,
पानी लाई हूँ मुख धोलो।
बीती रात कमल दल फूले,
उनके उपर भौंरे झूले
नभ में न्यारी लाली छाई,
धरती पौ फटी छविपाई
ऐसा सुन्दर समय न खोओ,
मेरे प्यारे अब मत सोओ।

आज के दौर में भी प्रकाश मनु, डॉ. उषा यादव, श्रेया शर्मा, रमेश चन्द्र, इंदिरा परमार, वीरेन्द्र मिश्र, डॉ0 चक्रधर नलिन आदि नये रचनाकार रचनाएँ कर रहे हैं तथा इन कवियों ने आधुनिकता के खतरे के आहट को पहचान लिया है तथा बाल कविता को अस्तित्व को बचाने के प्रयास में लग गये हैं। इस संदर्भ में सविता कुमारी श्रीवास्तव अपने लेख में लिखती हैं ''बाल साहित्यकारों के लेखन से बाल कविता समृद्ध होती जा रही है जिसमें बच्चों के मनोविज्ञान को उनके व्यक्तित्व को समझने का प्रयास किया गया है। बेशक बच्चों के लिए लिखकर हमें जीवन की सबसे निर्मल और पवित्रतम अनुभूति होती है, जिनमें हमारा मन और अन्तःकरण भी निमज्जित होता है''[3]

हिन्दी बाल कथा साहित्य का बाल साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। कहानियाँ बच्चों में सुनने और धैर्य का गुण विकसित करती है। कहानियों से बच्चों का परिचय दादी–नानी की परी कथाओं से हो जाता है, जिससे बच्चों में कथा साहित्य के प्रति शुरू से रूझान रहता है। कहानियाँ मनोरंजन के साथ–साथ बच्चों तक अपनी बात पहुँचाने का, नैतिक शिक्षा देने का तथा नये ज्ञान से परिचित कराने का अच्छा एवं सरल माध्यम है। कहानियों का Concept सबसे लचीला होता है इसमें नये विषय का भी आसानी से मिश्रण हो जाता है जिसके आधार पर नयी–नयी कहानियाँ गढ़ी जाती हैं अतः कथा साहित्य में विविधता भी होती है। बाल कहानियों के लम्बे सफर पर डॉ0 जाकिर अली रजनीश लिखते हैं–''बाल कहानी की यह समृद्ध परम्परा सौ सालों से अधिक का सफर तय कर चुकी है। इस दौरान जहाँ विषय के स्तर पर कहानियों में विविधता का विकास हुआ है, वहीं शिल्प के स्तर पर भी अनेकानेक प्रयोग देखने को मिले हैं। शिल्प के स्तर पर बात करें तो सबसे पहले भाषा की बात आती है। कहा जाता है कि सबसे अच्छी भाषा वह होती है, जो पात्रों के अनुसार व्यवहार करती है''[4] बाल कथा के साथ ऐसा ही है ये कहानियाँ बाल मनोविज्ञान को समझने का बढ़िया माध्यम है प्रेमचन्द की कहानी ईदगाह, विश्वम्भर नाथ शर्मा 'कौशिक' की कहानी 'ताई' और मन्नु भण्डारी का उपन्यास 'आपका बन्टी' ऐसे ही उदाहरण हैं जिसमें साहित्यकारों ने बाल मनोविज्ञान का सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है। हिन्दी साहित्य में आधुनिक काल के प्रारम्भ से ही बाल कहानी, उपन्यास, नाटक आदि लिखे जाते हैं स्वयं भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'अन्धेर नगरी' 'सत्य हरिश्चन्द जैसे नाटक लिखे हैं जो बच्चों द्वारा अभिनीत भी हुए हैं। वैसे भी नाटक बच्चों के लिए सबसे सक्रिय और जीवन्त तथा आकर्षक माध्यम है। नाटक के शिल्प डॉयलाग, वेश–भूषा आदि बच्चों में अन्य विधाओं के अपेक्षा ज्यादा उत्साह उत्पन्न करते हैं। साथ ही ''थियेटर बच्चों को अनुशासित ढंग से निर्णय लेने की कला सिखाता है ताकि वे अपने जीवनगत फैसले विवेक सम्मत रूप से ले सकें। कहना न होगा कि बाल रंगमंच का यह स्वरूप बच्चों के मानस को संस्कारित करने की एक ''थेरेपी' है।''[5]

ऐसे ही बाल पत्रिकाएं बच्चों के मनोवैज्ञानिक स्तर को ऊँचा करने में सहायक होती हैं। एक पत्रिका में कई स्तम्भ होते हैं। जैसे– कहानी, कविता, चुटकुले, पहेली आदि। ये सभी एक सार्थक मनोवैज्ञानिक वातावरण का निर्माण करते है। नंदन, चंपक, नन्हें सम्राट आदि जैसी बच्चों की पसंदीदा पत्रिकाएं हैं। विभिन्न प्रतिष्ठित पत्रिकाएं भी समय–समय पर विशेष बाल अंक निकालती हैं। इन्हीं पत्रिकाओं ने बच्चों के मनोरंजन का एक और माध्यम निकाला 'कार्टून', यह सजीव चित्रण रचनाएं हैं जो कल्पना को साकार रूप देते हैं। कई सारे हिन्दी कॉमिक्स भी प्रचलित रहे हैं– चाचा चौधरी, नागराज आदि। इन कॉमिक्स की यह भी खासियत है कि इनमें प्रतीक चिन्हों का भरपूर उपयोग होता है रोना, हँसना, चिल्लाना, ये सभी प्रतीकों के रूप में होते हैं जिसे देखने में एक समझ विकसित होती है। पर वही कार्टून जो T.V. चैनलों पर दिखाये जाने लगे है। उसमें कहीं कहीं बहादुरी या योद्धा को दिखाने में अतिश्योक्ति हो जाती है जिससे बच्चों को गलत सन्देश मिलता है। ''कार्टून चैनल्स पर हिंसा देखते– देखते बच्चे अपने परिवेश में होने वाली हिंसा को सहजता से स्वीकार कर लेते हैं और उनके मन में कोई भावोद्वेलन नहीं होता। एक बहुत ही लोकप्रिय कार्टून है–'टॉम एण्ड जेरी' जिसमें एक बिल्ली और चूहे के प्रति भारी हिंसा और प्रतिहिंसा चली है। 1970 के दशक में अमेरिका में भारी विरोध के बाद 'टॉम एण्ड जेरी' के प्रसारण पर बैन लगा दिया गया था .... कार्टून के चरित्र इस सारी हिंसा के बावजूद बच जाते हैं जिससे बच्चे के मन को यह सन्देश जाता है कि अगर वे भी किसी के प्रति हिंसात्मक व्यवहार करेंगे तो उन्हें कोई नुकसान नहीं होगा''[6] जिससे बच्चों में गलतफहमी उत्पन्न होती है। यही अन्तर है इस तरह के टी0वी0 कार्यक्रमों और साहित्य में साहित्य बच्चों में सही समझ विकसित करता है। बच्चों

की छोटी सी कविता जिसे हम सभी ने जरूर अपने बचपन में पढ़ा होगा–मछली जल की रानी है जीवन उसका पानी है। हाथ लगाओगे तो डर जायेगी, बाहर निकालोगे तो मर जायेगी। सुनने में सरल और साधारण लगने वाली इस कविता में भी बच्चों को एक नैतिक शिक्षा देने की कोशिश की गयी है। यह मनोरंजन के साथ उपयोगिता भी दिखता है।

परन्तु आज समय जितना जटिल होता जा रहा उस हिसाब से बाल साहित्य उतना ही सीमित होता जा रहा है क्योंकि कहीं न कहीं बौद्धिक वर्ग के पास बच्चों के लिए समय नहीं है और न वह रूचि लेते हैं मगर बाल साहित्यकारों की जिम्मेदारी और बढ़ गयी है कि वह बच्चों को सुगम, ज्ञानवर्धक, मनोरंजक साहित्य दें जिसके लिए यह देखना होगा की बच्चों के साहित्य का विषय क्या हो? मतलब क्या अब भी बच्चे पेड़ पौधों, पशु पक्षियों, राजा–रानी, परियों का ही साहित्य पढ़े या नहीं।

निष्कर्ष

आज उत्तर आधुनिक समय में इन विषयों के विस्तार की आवश्यकता है। विज्ञान तकनीकि के युग में जरूरी है कि बाल साहित्य को भी अपनी गति बढ़ानी होगी तथा बाल साहित्य को बच्चों के लिए नये विषय जोड़े जाने की कवायद करनी होगी। जिससे यही बच्चे आगे चलकर स्वस्थ्य मानसिकता वाले समाज का निर्माण कर सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *लेखः निरंकार देव सेवक, आजकल (पत्रिका)– (सं) फरहतनवीन, नवम्बर, 2011, नई दिल्ली पृ0 48*
2. *बतूता का जूता – सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, कविता कोश– www.kavitakosh.org*
3. *लेख : सविता कुमारी श्रीवास्तव, हिंदुस्तानी एकेडमी : (सं) रविनंदन सिंह, अप्रैल–जून 2015, इलाहाबाद, पृ0 सं0 130*
4. *लेख : डा0 जाकिर अली, वही, पृ0सं0 48*
5. *लेख : पुष्पा बरनवाल, आजकल पत्रिका– (सं) फरहत नवीन, नवम्बर, 2015, नई दिल्ली, पृ0 1*
6. *लेख : डा0 राजेश हर्षवर्धन, कथा (पत्रिका),: (सं) अनुज, अक्टूबर, 2014, नई दिल्ली, पृ0 सं0 279*